

[2009] 5 एस. सी. आर. 482

रामा चौधरी

बनाम

बिहार राज्य

(2009 की दांडिक अपील संख्या 619)

2 अप्रैल, 2009

[एस. बी. सिन्हा और पी. सदाशिवम, न्यायमूर्तिगण]

दंड प्रक्रिया संहिता, 1973:

धारा 173 और 231 - आगे की अन्वेषण - अनुमति- निर्णय: आगे की अन्वेषण अनुमेय है, हालांकि, पुनः अन्वेषण निषिद्ध है - आगे की अन्वेषण करना आरोपपत्र दाखिल करने के बाद भी पुलिस का वैधानिक अधिकार है - यह किसी भी स्तर पर नए साक्ष्यों के आधार पर पूरक आरोपपत्र प्रस्तुत कर सकती है - आगे की अन्वेषण के लिए दंडाधिकारी से पूर्व अनुमति की आवश्यकता नहीं है - तथ्यों के आधार पर, पूरक आरोपपत्र में नामित साक्षियों को तलब करने का विचारण न्यायालय का आदेश अवैध नहीं है - धारा 231 के तहत अभियोजन पक्ष किसी भी व्यक्ति को साक्षी के रूप में पेश करने का हकदार है, भले ही ऐसे व्यक्ति का नाम पिछली आरोपपत्र में न हो।

'आगे की अन्वेषण' - अर्थ - अभिनिर्धारित: क्या यह पिछली अन्वेषण की निरंतरता है, न कि कोई नई अन्वेषण या पुनःअन्वेषण जिसे पिछली अन्वेषण को पूरी तरह से अपास्त करके शुरू से शुरू किया जाना है?

इस अपील में विचार के लिए जो प्रश्न उठा, वह यह था कि क्या उच्च न्यायालय का यह आदेश उचित था कि पूरक आरोप पत्र में नामित साक्षियों को तलब करने में कोई अवैधता या अनियमितता नहीं थी?

अपील खारिज करते हुए न्यायालय ने

अभिनिर्धारित किया: 1.1. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 (8) को पढ़ने मात्र से ही यह स्पष्ट हो जाता है कि उपधारा (2) के अंतर्गत दंडाधिकारी को भेजी गए प्रतिवेदन के बावजूद यदि थाना के प्रभारी अधिकारी को और साक्ष्य प्राप्त होते हैं, तो उनका यह दायित्व है कि वे ऐसे साक्ष्यों के संबंध में निर्धारित प्रारूप में एक और प्रतिवेदन के साथ उन्हें दंडाधिकारी को भेजें। यह प्रावधान यह भी स्पष्ट करता है कि आगे की अन्वेषण की अनुमति है, हालांकि, पुर्नअन्वेषण निषिद्ध है। कानून आगे की अन्वेषण के लिए दंडाधिकारी से पूर्व अनुमति लेने का आदेश नहीं देता है। आरोपपत्र दाखिल करने के बाद भी आगे की अन्वेषण करना पुलिस का वैधानिक अधिकार है। पूर्व अनुमति के बिना पुर्नअन्वेषण निषिद्ध है। [कंडिका 8 और 9] [488-जी -एच; 489-ए -बी]

1.2. धारा 173 की उपधारा (2) और उपधारा (8) को ध्यानपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट है कि उपधारा (2) के अंतर्गत पुलिस प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के बाद भी, अन्वेषण पूरी होने पर, पुलिस को धारा 173 की उपधारा (8) के अंतर्गत "आगे" की अन्वेषण का अधिकार है, न कि "नई अन्वेषण" या "पुर्नअन्वेषण" का। "आगे" का अर्थ है अतिरिक्त; अधिक; या पूरक। इसलिए, "आगे" की अन्वेषण, पिछली अन्वेषण की निरंतरता है, न कि कोई नई अन्वेषण या पुर्नअन्वेषण जिसे पिछली अन्वेषण को पूरी तरह से समाप्त करके शुरू किया जाए। धारा 173 की उपधारा (8) स्पष्ट रूप से यह निर्धारित करती है कि आगे की अन्वेषण पूरी होने पर, अन्वेषण

एजेंसी को दंडाधिकारी को "आगे" की प्रतिवेदन भेजनी होगी, न कि ऐसी अन्वेषण के दौरान प्राप्त "अतिरिक्त" साक्ष्यों के संबंध में एक नई प्रतिवेदन । [कंडिका 10] [489-सी-ई]

1.3. आगे की अन्वेषण का मुख्य उद्देश्य सत्य तक पहुंचना और वास्तविक एवं ठोस न्याय करना है। अन्वेषण एजेंसी के आगे की अन्वेषण में केवल देरी के आधार पर बाधा नहीं डाली जानी चाहिए। विचारण के समापन में और देरी होने की संभावना मात्र आगे की अन्वेषण में बाधा नहीं बननी चाहिए, यदि इससे न्यायालय को सत्य तक पहुंचने और वास्तविक एवं ठोस तथा प्रभावी न्याय करने में सहायता मिलती है। [कंडिका 11] [489-एफ-जी]

1.4. पूरक आरोपपत्र में नामित साक्षियों को तलब करने का विचारण न्यायालय का आदेश त्रुटिपूर्ण नहीं है। अन्वेषण और छानबीन के बाद 11.03.2004 को आरोप तय किए गए और उसके बाद विचारण की सुनवाई के दौरान लगभग 21 साक्षियों की अन्वेषण की गई। इसी बीच, पुलिस ने कुछ नई आलेख के साथ पूरक आरोप पत्र प्रस्तुत किया और पूरक आरोपपत्र के आधार पर, अभियोजन पक्ष ने एक लंबित सत्र न्यायालय में विचारण न्यायालय में एक आवेदन दायर किया आरोपपत्र में नामित व्यक्तियों को तलब करने के लिए अभियोजन पक्ष के साक्षियों के रूप में उनकी अन्वेषण के लिए। आवेदन का ध्यानपूर्वक अवलोकन करने पर, विचारण न्यायालय ने इसे स्वीकार कर लिया और पूरक आरोपपत्र में नामित उन साक्षियों को तलब किया। आगे की अन्वेषण में एकत्रित आलेख को केवल इसलिए खारिज नहीं किया जा सकता क्योंकि इसे विचारण की सुनवाई के चरण में प्रस्तुत किया गया है। यह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 231 से भी स्पष्ट है। अभियोजन पक्ष को किसी भी व्यक्ति को साक्षी के रूप में पेश करने का अधिकार है, भले ही उस व्यक्ति का नाम पिछली आरोपपत्र में न हो। दंडाधिकारी ने पूरक आरोप पत्र के आधार पर साक्षियों को तलब करते समय इन सभी प्रासंगिक पहलुओं पर ध्यान

दिया। उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण याचिका को सही ढंग से खारिज करके इस बात को सही समझा। [कंडिका 12 और 13] [489-एच; 490-ए-जी]

हसनभाई वलीभाई कुरैशी बनाम गुजरात राज्य और अन्य (2004) 5 एससीसी 347 और के. चंद्रशेखर बनाम केरल राज्य और अन्य (1998) 5 एससीसी 223, संदर्भित।

नज़ीर संदर्भ:

(2004) 5 एसएससी 347 संदर्भित कंडिका 11

(1998) 5 एसएससी 223 संदर्भित कंडिका 13

दांडिक अपीलीय क्षेत्राधिकार: 2009 का दांडिक अपील संख्या 619

पटना उच्च न्यायालय के दिनांक 10.12.2008 के निर्णय एवं आदेश से, 2008 के दांडिक पुनरीक्षण संख्या 437 में।

अपीलकर्ता के लिए यू.यू. ललित, रुद्रेश्वर सिंह, कौशिक पोद्दार, गोपाल झा और तपेश कुमार सिंह।

उत्तरदाता के लिए, विमला सिंह (गोपाल सिंह के लिए)

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति पी. सदाशिवम द्वारा सुनाया गया। 1. अनुमति प्रदान की गई।

2. यह अपील पटना उच्च न्यायालय के 2008 के दांडिक पुनरीक्षण संख्या 437 दिनांक 10.12.2008 के आदेश के विरुद्ध है, जिसमें पूरक आरोपपत्र में नामित साक्षियों को तलब करने में कोई अवैधता या अनियमितता न पाए जाने के बाद, उच्च न्यायालय ने अपीलकर्ता द्वारा

2004 के सत्र परीक्षण संख्या 63 में दिनांक 19.02.2008 को पारित आदेश के विरुद्ध दायर दांडिक पुनरीक्षण को खारिज कर दिया, जिसमें अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश ने पूरक आरोपपत्र में नामित साक्षियों को तलब करने के लिए अभियोजन पक्ष के आवेदन को स्वीकार कर लिया था।

3. वाद के संक्षिप्त तथ्य इस प्रकार हैं:

(क) सिवान मुफस्सिल थाना में अवध यादव की पत्नी श्रीमती चंपा देवी के फर्द बयान के आधार पर, अपीलकर्ता और अन्य के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 364/34 के तहत 13.01.2001 को 2001 का कांड संख्या 8 दर्ज किया गया था।

(ख) 08.08.2003 को शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत भी एक अपराध जोड़ा गया। पुलिस ने अन्वेषण पूरी करने के बाद, 29.08.2003 को अपीलकर्ता और अन्य पांच आरोपियों के खिलाफ भारतीय दंड संहिता की धारा 364/34 और शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के तहत आरोप पत्र प्रस्तुत किया। इस आरोप पत्र में, अभियोजन पक्ष ने बताया है कि वे कुल 18 साक्षियों की जांच करने जा रहे हैं।

(ग) 11.03.2004 को, विद्वान सत्र न्यायाधीश ने धारा 120-ख, 364/34, 302/34 और 201/34 भारतीय दंड संहिता के तहत शस्त्र अधिनियम की धारा 27 के साथ अभियोग निर्धारित किए। अभियोजन पक्ष ने 21 साक्षियों की जांच की।

(घ) जब विचारण समापन के चरण में था, 08.09.2007 को, पुलिस ने सिवान के मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी की न्यायालय में अभियोगित आरोपियों के खिलाफ एक और आरोपपत्र प्रस्तुत किया, जिसमें आठ नए साक्षियों के नाम जोड़े गए। उक्त प्रतिवेदन /अभियोग पत्र में, पुलिस ने किसी भी आरोपी का नाम नहीं

बताया। माननीय मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी, सिवान ने धारा 190 दंड प्रक्रिया संहिता के तहत कार्यवाही किए बिना, 10.09.2007 को दूसरे अभियोग पत्र को सिवान के सत्र/विशेष न्यायालय को भेज दिया।

- (ड) 12.01.2008 को अभियोजन पक्ष ने लंबित 2004 के सत्र विचारण संख्या 63 में द्वितीय आरोपपत्र में नामित अभियोजन पक्ष के साक्षियों को तलब करने के लिए एक आवेदन दायर किया। अपीलकर्ता ने यह तर्क देते हुए एक उत्तर दाखिल किया कि अभियोजन पक्ष द्वारा दायर आवेदन विचारणीय नहीं है और इसे दुर्भावनापूर्ण इरादे से दायर किया गया था। दिनांक 19.02.2008 के आदेश द्वारा, विशेष न्यायालय के विद्वान सत्र न्यायाधीश ने साक्षियों को तलब करने के लिए उक्त आवेदन को यह देखते हुए स्वीकार कर लिया कि दांडिक विचारण का उद्देश्य सत्य का पता लगाना है और उस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए सर्वोत्तम संभव साक्ष्य को अभिलेख पर लाया जाना चाहिए। विद्वान सत्र न्यायाधीश ने नए जोड़े गए साक्षियों को समन जारी किया और वाद की सुनवाई 23.02.2008 को स्थगित कर दी। उक्त आदेश से व्यथित होकर अपीलकर्ता ने दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 397 और 401 के तहत 2003 का दांडिक पुनरीक्षण संख्या 437 उच्च न्यायालय में दायर की। उच्च न्यायालय ने दिनांक 10.12.2008 के अपने निर्णय और आदेश द्वारा उक्त पुनरीक्षण याचिका खारिज कर दी। इससे व्यथित होकर अपीलकर्ता ने उपरोक्त अपील दायर की।

4. हमने अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री यू.यू. ललित और बिहार राज्य की विद्वान अधिवक्ता श्रीमती विमला सिन्हा की तर्क सुनीं।

5. अपीलकर्ता के विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ता श्री यू.यू. ललित ने प्रासंगिक आलेख और दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 की धारा 173(2) और (8) का हवाला देते हुए तर्क दिया कि उपधारा (8) में संदर्भित "आगे की अन्वेषण" का अर्थ उन आरोपियों के खिलाफ "पुनः अन्वेषण" नहीं है, जिन पर पहले से ही विचारण चल रहा है। उन्होंने आगे बताया कि वर्तमान वाद में, वर्ष 2003 में धारा 173(2) के तहत आरोप पत्र दाखिल होने के बाद, मुख्य न्यायिक दंडाधिकारी द्वारा अपराध का संज्ञान लिया गया और मामला सत्र न्यायालय को वापस भेज दिया गया। विचारण शुरू हुआ और कुल 21 साक्षियों की जांच की जा चुकी है। विलंबित अवस्था में, अभियोजन पक्ष ने आगे की अन्वेषण के लिए यह प्रतिवेदन दाखिल की है, जिसका उद्देश्य विचारण के निपटारे में देरी करना है। उनके अनुसार, दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173(8) के तहत परिकल्पित आगे की अन्वेषण, उसी अपराध के संबंध में उसी आरोपी के खिलाफ तब तक नहीं की जा सकती जब तक कि मुकदमा पहले ही शुरू न हो जाए। उनके अनुसार, इस समय, अभियोजन पक्ष द्वारा आठ नए साक्षियों को तलब करने के आवेदन को स्वीकार करने से विचारण में आरोपी के बचाव पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ेगा।

6. दूसरी ओर, बिहार राज्य की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्रीमती विमला सिन्हा ने प्रस्तुत किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उपधारा (8) अन्वेषण एजेंसी को किसी भी स्तर पर नए साक्षियों के आधार पर आगे की अन्वेषण करने और पूरक आरोप पत्र प्रस्तुत करने का अधिकार देती है और उसे वैधानिक कर्तव्य प्रदान करती है, और आगे की अन्वेषण के लिए दंडाधिकारी से पूर्व अनुमति की आवश्यकता नहीं है। उन्होंने आगे प्रस्तुत किया कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 231 अभियोजन पक्ष को किसी भी व्यक्ति को साक्षी के रूप में पेश करने का

असीमित अधिकार देती है, भले ही पुलिस ने उस व्यक्ति से पूछताछ न की हो, यदि अभियोजन पक्ष की कहानी को उजागर करने के लिए उस व्यक्ति की पूछताछ आवश्यक हो।

7. दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 173 की उपधारा (1) यह स्पष्ट करती है कि प्रत्येक अन्वेषण अनावश्यक विलंब के बिना पूरी की जाएगी। उपधारा (2) यह अनिवार्य करती है कि जैसे ही अन्वेषण पूरी हो जाए, थाना का प्रभारी अधिकारी, पुलिस प्रतिवेदन पर अपराध का संज्ञान लेने के लिए अधिकृत दंडाधिकारी को राज्य सरकार द्वारा निर्धारित प्रारूप में एक प्रतिवेदन भेजेगा, जिसमें पक्षों के नाम, सूचना की प्रकृति, उन व्यक्तियों के नाम जो वाद की परिस्थितियों से परिचित प्रतीत होते हैं, और आगे के विवरण जैसे कि किए गए अपराधों के नाम, आरोपी की गिरफ्तारी और जमानत के साथ या बिना जमानत के उसकी रिहाई के बारे में जानकारी शामिल होगी। अन्य उपधाराओं में, हम उपधारा (8) के बारे में विशेष रूप से चिंतित हैं, जो इस प्रकार है:-

(8) इस धारा में ऐसा कुछ भी नहीं माना जाएगा जिससे उपधारा (2) के तहत प्रतिवेदन भेजे जाने के बाद किसी अपराध के संबंध में आगे की अन्वेषण को रोका जा सके। और जहां ऐसी अन्वेषण के बाद थाना के प्रभारी अधिकारी को मौखिक या दस्तावेजी रूप में अतिरिक्त साक्ष्य प्राप्त होता है, तो वह ऐसे साक्ष्य के संबंध में निर्धारित प्रारूप में दंडाधिकारी को एक या एक से अधिक प्रतिवेदन भेजेगा; और उपधारा (2) से (6) के प्रावधान, जहां तक संभव हो, ऐसी प्रतिवेदन पर लागू होंगे, जैसे वे उपधारा (2) के तहत भेजी गई प्रतिवेदन पर लागू होते हैं।

8. उपरोक्त प्रावधान को पढ़ने मात्र से यह स्पष्ट हो जाता है कि उपधारा (2) के अंतर्गत दंडाधिकारी को भेजी गई प्रतिवेदन के बावजूद, यदि थाना के प्रभारी अधिकारी को कोई अतिरिक्त

साक्ष्य प्राप्त होता है, तो उसका यह दायित्व है कि वह उसे निर्धारित प्रारूप में ऐसे साक्ष्य के संबंध में एक और प्रतिवेदन के साथ दंडाधिकारी को भेजे।

9. उपरोक्त प्रावधान से यह भी स्पष्ट होता है कि आगे की अन्वेषण की अनुमति है, हालांकि, पुर्नअन्वेषण निषिद्ध है। कानून आगे की अन्वेषण के लिए दंडाधिकारी से पूर्व अनुमति लेने का प्रावधान नहीं करता है। आरोपपत्र दाखिल करने के बाद भी आगे की अन्वेषण करना पुलिस का वैधानिक अधिकार है। पूर्व अनुमति के बिना पुर्नअन्वेषण निषिद्ध है। दूसरी ओर, आगे की अन्वेषण अनुमेय है।

10. धारा 173 की उपधारा (2) और उपधारा (8) को ध्यानपूर्वक पढ़ने से यह स्पष्ट है कि अन्वेषण पूरी होने पर उपधारा (2) के तहत पुलिस प्रतिवेदन प्रस्तुत करने के बाद भी, पुलिस को धारा 173 की उपधारा (8) के तहत "आगे" की अन्वेषण का अधिकार है, न कि "नई" अन्वेषण या "पुर्नअन्वेषण" का। "आगे" का अर्थ है अतिरिक्त; अधिक; या पूरक। अतः, "आगे की" अन्वेषण, पिछली अन्वेषण की निरंतरता है, न कि शुरू से कोई नई अन्वेषण या पुर्नअन्वेषण, जो पिछली अन्वेषण को पूरी तरह से समाप्त कर दे। धारा 173 की उपधारा (8) स्पष्ट रूप से यह निर्धारित करती है कि आगे की अन्वेषण पूरी होने पर, अन्वेषण एजेंसी को दंडाधिकारी को ऐसी अन्वेषण के दौरान प्राप्त "आगे" साक्ष्यों के संबंध में एक "आगे" प्रतिवेदन भेजनी होगी, न कि कोई नई प्रतिवेदन ।

11. जैसा कि *हसनभाई वलीभाई कुरैशी बनाम गुजरात राज्य और अन्य*, (2004) 5 एससीसी 347 में देखा गया है, आगे की अन्वेषण का मुख्य उद्देश्य सच्चाई तक पहुंचना और वास्तविक एवं ठोस न्याय करना है। अन्वेषण एजेंसी के हाथ केवल देरी के आधार पर नहीं बांधे जाने चाहिए। दूसरे शब्दों में, विचारण को समाप्त करने में और देरी होने मात्र से आगे की

अन्वेषण में बाधा नहीं आनी चाहिए, यदि इससे न्यायालय को सच्चाई तक पहुंचने और वास्तविक एवं ठोस न्याय करने में मदद मिलती है।

12. यदि हम उपरोक्त कानूनी सिद्धांतों पर विचार करें, तो सत्र न्यायालय का दिनांक 19.02.2008 का आदेश, जिसमें पूरक आरोपपत्र में नामित साक्षियों को तलब किया गया था, त्रुटिपूर्ण नहीं है। यह सत्य है कि पूछताछ और अन्वेषण के बाद 11.03.2004 को आरोप तय किए गए थे और उसके बाद विचारण की सुनवाई के दौरान लगभग 21 साक्षियों की जांच की गई थी। इसी बीच, पुलिस ने कुछ नई आलेख के साथ पूरक आरोपपत्र प्रस्तुत किया और पूरक आरोपपत्र के आधार पर, अभियोजन पक्ष ने 12.01.2008 को लंबित सत्र परीक्षण संख्या 63/2004 में सत्र न्यायालय में एक आवेदन दायर किया, जिसमें आरोपपत्र में नामित व्यक्तियों को अभियोजन पक्ष के साक्षियों के रूप में उनकी जांच के लिए तलब करने का अनुरोध किया गया था। आवेदन का ध्यानपूर्वक अवलोकन करने पर, विचारण न्यायालय ने दिनांक 19.02.2008 के आदेश द्वारा इसे स्वीकार कर लिया और पूरक आरोप पत्र में नामित साक्षियों को तलब किया।

13. कानून आगे की अन्वेषण के लिए दंडाधिकारी से पूर्व अनुमति लेना अनिवार्य नहीं करता है। यह स्थापित कानून है कि आरोपपत्र दाखिल करने के बाद भी आगे की अन्वेषण करना पुलिस का वैधानिक अधिकार है। [देखें के. चंद्रशेखर बनाम केरल राज्य और अन्य, (1998) 5 एससीसी 223] आगे की अन्वेषण में एकत्रित आलेख को केवल इसलिए खारिज नहीं किया जा सकता है क्योंकि इसे विचारण के चरण में दाखिल किया गया है। तथ्य और परिस्थितियाँ दर्शाती हैं कि विचारण न्यायालय आगे की अन्वेषण के दौरान जांचे गए साक्षियों को तलब करने के लिए पूरी तरह से उचित है। दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 231 से भी स्पष्ट है कि अभियोजन पक्ष किसी भी व्यक्ति को साक्षी के रूप में पेश करने का हकदार है, भले ही उस

व्यक्ति का नाम पिछली आरोपपत्र में न हो। इन सभी प्रासंगिक पहलुओं को विद्वान दंडाधिकारी ने पूरक आरोपपत्र के आधार पर साक्षियों को तलब करते समय ध्यान में रखा है। उच्च न्यायालय ने पुनरीक्षण याचिका को सही ढंग से खारिज करके इस बात को सही ढंग से समझा। हम इस निष्कर्ष से पूरी तरह सहमत हैं।

14. उपरोक्त चर्चा के आलोक में, हमें हस्तक्षेप का कोई वैध आधार नहीं मिलता, इसलिए अपील खारिज की जाती है।

एन.जे.

अपील खारिज की जाती है

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।